Global Journal of Multidisciplinary Studies Available online at www.gjms.co.in
Volume 3, Issue 3, Feb 2014
ISSN: - 2348-0459

आधुनिक काव्यशास्त्र के आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी

शिखा झाारिया
संस्कृत पालि एंव प्राकृत विभाग,
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

सारांश

प्राचीन काव्य शास्त्रियों ने भिन्न-भिन्न दृष्टियों से काव्य के अनेक भेद किए हैं उसी परम्परा में काव्यभेद की प्रक्रिया आज भी प्रचलित है। आज भी निरंतर नई-नई विधाओं के दृष्टि पथ में लक्षण बन रहे है। राधावल्लभ त्रिपाठी जी काव्यभेद की प्राचीनतम आधारभूत परंपरा का स्मरण करते हुए कहते हैं कि काव्य के मूलतः दो भेद है- पौरूषेय और अपौरुषेय।1

पौरुषैय - पौरूषेय शब्द से उन काव्यों का ग्रहण होता **है**। जो लोकोत्तर वर्णन में निपुण कवि द्वारा नवनवोन्मेषशाली प्रतिभा के प्रभाव से निबद्ध होते हैं।

अपौरुषेय - अपौरुषेय का अभिप्राय ऐसे काव्य से है जिनका साक्षात्कार किया गया हो जो पुरूष के आयास से जन्य न हो। जैसेः- वेद

राधावल्लभ जी का अपना स्वतंत्र सिद्धांत है कि पौरुषेय काव्य भी अपौरुषैय होता है और अपौरुषेय काव्य भी पौरुषेय होता है इस संबंध में उनका कथन है कि ''यद्यपि अपौरुषेय काव्यों में भी जब तक ऋषि कवि साक्षात्कृत काव्यवस्तु को अभिव्यक्ति नहीं देता तब तक रचना में समग्रता नहीं आती। अतः उसमें भी पौरुषैयत्व का योग होता ही है। इसी प्रकार ऋषिकल्प कवि कालिदास आदि की कृतियों में साक्षात्कार ही काव्य का जनक होता है। सामान्यजन के समान चेष्टा करने से काव्य का निर्माण नहीं होता। अतः उन कालिदास आदि सिद्ध कवियों की रचनाओं का भी अपौरुषेयत्व स्वीकार करना चाहिए।''

प्रमाण रूप में ऋग्वेद के दसवें मंडल का उदाहरण देते हुए अपने कहा है कि-

''सक्तुमिव तितउना पुनन्तों यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत रथं न धीरा स्वदा अतक्षाम, वस्त्रेण भद्रा सुकृता''[2]

नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा के धनी ''प्रोफेसर राधावल्लभ त्रिपाठी'' जी ने तो रूप की दृष्टि से काव्य के भेद करते है और न अर्थ की दृष्टि से अपितु वे काव्य की श्रेष्ठता के आधार पर उसके भेद करते है। भेदगणना की दृष्टि से देखें तो त्रिपाठी जी ने काव्य के चार भेद किए है।

''चतुर्विधं तत्। उत्तमोत्तम्, उत्तमम, मध्यमम, अवरच। सर्वांगीण जीवनं निर्दिशत् महावाक्यं प्रथमम, जीवस्यैकदेशं निर्दिशद् द्वितीयम् वस्तुविशेषं मन स्थिति विशेषं वा। प्रकाशयन्मध्यमम् पदाथमात्र पर्यवसिंत त्ववरम्। नानादिक्क लावचिछन्नानां वाक्यानां पुरुषार्थप्रवर्तकः समूहो महावाक्यम्।''[III]

वह काव्य चार प्रकार का है। उत्तमोत्तम, उत्तम, मध्यम और अवर। सर्वांगीण जीवन का निर्देश करने वाला महावाक्य उत्तमोत्तम, जीवन के एकदेश का निर्देश करने वाला उत्तम, वस्तु विशेष या मनः स्थिति विशेष को प्रकाशित करने वाला मध्यम, पदार्थमात्र में पर्यवसित होने वाला अवर काव्य है नाना दिशाओं और काल से अवच्छिन्न वाक्यों का पुरूषार्थ प्रवर्तक समूह महावाक्य है।

(1) **उत्तमोत्तम काव्य :-** उत्तमोत्तम काव्य मैं जीवन का सम्पूर्ण (सर्वागीण) रूप निर्दिष्ट होना है। वह समस्त शास्त्रों और विधाओं के योग से समुल्लसित और समस्त शास्त्रों के तत्वों से मिला होता हैं वह जगत् के विविध अवस्थाओं के परिज्ञान में प्रमाण तथा अभिनव कल्पनाओं से मनोहर होता है।

इस संबंध में आचार्य त्रिपाठी की दृष्टि सर्वथा नवीन है। जीवन के सर्वांगीण स्वरूप का निर्देश करने वाला महावाक्य की यहा उत्तमोत्तम काव्य की कोटि में रखा गया है। यह भेद काव्य के वर्ण्यविषय और वर्णनानैपुण्य के आधार पर किया गया भेद है जो सर्वथा उचित और ग्राह्य है। समाधिस्थ कवि के द्वारा साक्षात्कृत जीवन का सर्वांगीण निरूपण ही इसका नियामक है। अतः ''सर्गबन्धों महाकाव्यम्''

जैसे महाकाव्य लक्षण यहाँ स्वयं तिरस्कृत हो जाते हैं। महाकाव्य के रूप में प्रतिष्ठित शिशुपालवंध और किरातार्जुनीय जैसी रचनाएँ भी 'उत्तमौत्तम' काव्य के दायरे से बाहर हो जाती हैं क्योंकि इनमें जीवन का सर्वांगीण वर्णन न होकर उसके एक देश का वर्णन है। उत्तमोत्तम काव्य को आचार्य ने 'महाकाव्य' कहा है।

त्रिपाठी जी महावाक्य का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहते है-

''महावाक्यं जीवनस्य सर्वांगीण स्वरूप निरूपण्रख एव चात्र विशिष्यतें किं नाम महावाक्यू? वाक्योच्चयो महावाक्यमित्याह साहित्यदर्पण कारः।''[4]

महावाक्यता और जीवन की सर्वांगीणस्वरूप निरूपणपरता दोनों अलग-अलग हैं। महाकाव्य किसे कहते हैं? वाक्यों के समूह को साहित्यदर्पणकार ने महावाक्य कहा है। जैसे वाक्य में एक अर्थ घोतित करने की शक्ति रहती है उसी प्रकार वाक्यों के समूह में एकवाक्यता होने पर महावाक्य बनता है। प्रबन्ध में भिन्न प्रकरणों में प्रयुक्त होकर भी अनेक वाक्य परस्पर अन्तित होकर एकवाक्यता सिद्ध करते हैं। पातञ्जलि ने भी कहा है भिन्न स्थल में प्रयुक्त होकर भी वाक्य एक वाक्यता का प्रतिपादन करते हैं। अतः शाखान्तरोक्त वाक्यों का भी प्रधान वाक्य के साथ व्यवहार होता।

(2) **उत्तमकाव्य :-**

जीवन के किसी एक पक्ष और शास्त्र के एकदेश का निर्देश करने वाला, प्रसंगविशेष अथवा दशा विशेष का निरूपण करने वाला सुंदर कल्पना विलास से मनोहर महाकाव्य उत्तम काव्य कहलाता है। जैसे-भारती, माद्य श्रीहर्ष और रत्नाकर आदि के महाकाव्य अथवा जैसे हिन्दी भाषा में निबद्ध जयशंकर प्रसाद का 'कामायनी' महाकाव्य सनातन कवि रेखाप्रसाद द्विवेदी का उत्तरसीताचरित और अभिराजराजेन्द्र मिश्र का जानकीहरण महाकाव्य भी इसी के उदाहरण हैं।

(3) **मध्यम काव्य** :- जीवन में वस्तुविशेष या मनः स्थिति विशेष को प्रकाशित करने वाला मध्यम काव्य कहलाता है। पदार्थ विशेष के वैचित्र्य का निदर्शक या मनोदशा मात्र का प्रकाशक काव्य मध्यम काव्य हैं

जैसे–भल्लट आदि कवियों की अन्योक्तियाँ। कभी–कभी इन काव्यों में महावाक्यता भी होती है और तब ऐसे काव्य उत्तम कोटि का संस्पर्श करते है। जैसे–अमरूक कवि ''लिखन्नास्ते भूमिम्'' यह मुक्तक। ज्ञानकवि की 'महाकालस्तुतिव' शीर्षक कविता जैसे–

''भस्मोद्धूलनहेतवे तव महाकालेरब्रूहितत्।

शिप्रारोधसि संचिता मम चिताकिं नोचिता स्यादिति।।''[V]

के महाकालेश्वरः यह बताओ कि सिप्रा तट पर संचित मेरी चिता तुम्हारे भस्मोद्धूलन के लिय उचित होगी या नहीं।

इस कविता में 'संचिता, चिता–नोचिता' में यमक का निबन्धन करते हुए कवि ने भक्तिभावना प्रकट की है। वह भक्ति भावना जीवन के मर्म का परामर्श करती हुई आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक लोकों का अवतरण करने के कारण महावाक्य बन गयी है। अतः यह उत्तम काव्य है। भोजन के पाक में कुशल पाचक के द्वारा मिश्रित नाना ओषधियाँ जिस प्रकार आस्वाद् उत्पन्न करती हैं उसी प्रकार इस काव्य में कवि के द्वारा मिश्रित विभिन्न शास्त्रों के निष्यन्द आस्वाद उत्पन्न करते हैं।

(4) अवरकाव्य :– वह किसी एक पदार्थ या वस्तु के वर्णन में पर्यवसित होता है। शब्दों के आडम्बर से परिपूर्ण प्रतिभा के दारिद्रय की दीनता से स्वरूप सुभाषितो से युक्त काव्य अवर है। जैसे मम्मट द्वारा उद्धत ''स्वच्छन्दोध्यछलदच्छकच्छकुहररच्छतेता राम्बुच्छटा'' इत्यादि पद्य इसी अवरकाव्य में आलेख्यप्रख्य अनुकृति परक अन्यच्छायायोनि काव्य भी अन्तर्भूत होते हैं। जैसे–

''नमस्तुभ्यं नेतृवर्य यत्कष्ठः पुष्करायते।

मदाभोगधनध्वाने नीलकण्ठस्य ताण्डवे।।''[VI]

मदजल की परिपूर्णता से गम्भीर तथा धीरध्वनि कला जिसका कण्ठ शिव के ताण्डव नृत्य के समय मृदंग के समान बनता है। उस नेता को नमस्कार हैं।

यहां आधुनिक नेता के विडम्बन के लिये प्राचीन श्लोक के दो पदों को बदल कर परिहास किया गया है। यद्यपि ऐसे काव्यों में अर्थविशेष का समुल्लास होता है तथापि इस प्रकार के काव्य में वर्णसावर्ण्य की रम्यता का आग्रह ही प्रधान होता हैं। जैसे-

''जटाधीश हठाधीश मठाधीश नमोस्तुते।''

यहां 'धीश' इस पदान्त व्यावृत्ति के मोह से ही कवि ने पदसन्नि-वेश किया है, अर्थ के समादर से नहीं। अतः ऐसे काव्य अवरकोटिक ही होते हैं। जिनमें प्रतिभा का कोई चमत्कार नहीं होता, जिनमें व्युत्पत्तिमात्र का प्रदर्शन होता है तथा जो नामावली कीर्तन मात्र में पर्यवसित होते हैं ऐसे सभी काव्य अवरकाव्य की कोटि में ही आते हैं।

इस संदर्भ में त्रिपाठी जी मम्मट के काव्यभेद की समीक्षा करते हुए कहते हैं कि - **''इदमुत्तममतिशयिनी व्यंग्ये वाच्याद् ध्वनिबुधैः कथितः अतादृशि गुणीभूतव्यङ्ग्यं व्यङग्ये तु मध्यमम् इति।''**

व्यंग्य के वाच्य अपेक्षा अतिशायी होने पर विद्वान उसे ध्वनि काव्य कहते हैं, वही उत्तम काव्य हैं। जहाँ व्यंग्य गुणीभूत होता है और वाच्य प्रधान होता है, वह मध्यम काव्य है। इत्यादि रूप से मम्मट ने उत्तम, मध्यम अधम काव्यों का लक्षण प्रस्तुत किया है किन्तु यह क्षोदक्षम नहीं है क्योंकि किसी काव्य में अतिशायी व्यंग्य के प्रधान होने पर भी वैसी चारूता नहीं होती जैसी दूसरे काव्य में वाच्य के प्रधान होने पर होती है। मम्मट द्वारा की उदाहत उत्तमकाव्य के उदाहरण ''निःशेषच्युतचन्दनस्तनतट'' इत्यादि में कैसी चारूता है? 'तुम उस अधम के पास रमण करने ही गयी थी, स्नान करने नहीं।' यहाँ तो दण्डाचरित को प्रकाशित करने वाला और उसके परिदेवनमात्र में पर्यवसित होने वाला व्यंग्य है इसी अपेक्षा अतिशय मनोहर, महापुरूषों के महान चरित्र को प्रकाशित करने वाले, वाच्य और व्यंग्य के परस्परवर्धाधिरोक से परिपूर्ण हरस्तु किंचित् परिलुप्त धैर्यः-धैर्यः इत्यादि काव्यबन्ध हैं। उनमें व्यंग्य अतिशायी नहीं है, यह मानकर उन्हें मध्यमकोटि में फेंक देना कहाँ तक उचित हैं। आपका यह कैसा ध्वनिडम्बर है? अतः काव्य के उत्तमत्व के निर्धारण में व्यंग्य का प्राधान्य मानदण्ड नहीं हो सकता।

काव्यभेद की परंपरा प्राचीन काल से ही प्रचलित है कुछ आचार्यो ने काव्य के दो भेद किए है- गद्य और पद्य, कुछ आचार्यो ने तीन भेद किए है- गद्य, पद्य और मिश्र। आचार्य मम्मट ने काव्य की दृष्टि से तीन भेद किए है- उत्तम, मध्यम और अधम। राधावल्लभजी ने काव्यभेदों की परम्परागत विधि से हटकर पारंपरिक होते हुए भी नवीनभेद की कल्पना की है उनके अनुसार मूल रूप से काव्य के दो भेद है- अपौरूषेय और पौरूषेय।

I. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम् पृ.25

II. ऋकसंहिता 10/71/2 उद्धृत अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम् पृ.26

III. अभिनवकाव्यालंकार सूत्रम् पृ. 20 (1/4/1 से 1/4/4)

IV. साहित्यदर्पण 2.1

V. प्रतापिनी पृ 30 उद्धृत अभिनवकाव्यालंकार सूत्र विमर्श पृ. 62

VI. संधानम् पृ. 53 उद्धृत अभिनवकाव्यालंकारसूत्र पृ. 24

VII. संधानम् पृ. 53 उद्धृत अभिनवकाव्यालंकारसूत्र पृ. 24